विद्यापति का काव्यजगत

यद्यपि विद्यापति के जन्म और मृत्यु दोनों को लेकर विद्वानों में मतभेद है तथापि अधिकांश विद्वानों का मानना है कि इनका जन्म 1330 ई. में दरभंगा जिले के बिस्फी नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम गणपति ठाकुर था। इनके परिवार में अध्ययन का विशेष महत्व था। पिता संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे। इनका अधिकांश जीवन मैथिल नरेशों के आश्रय में व्यतीत हुआ। इनकी विद्वता और काव्य – कला की दूर – दूर तक प्रशंसा थी। महाराज शिवसिंह के समय में इनका बहुत अधिक सम्मान था। इन्होंने अपने साहित्य को भाव, भाषा एवं शिल्प सभी स्तरों पर कृत्रिम और बोझिल होने से बचाया, इनके साहित्य की विशेषता सरलता और सहजता है। इन्होंने संस्कृत, अवहट्ठ और मैथिली में अनेक ग्रंथों की सर्जना की। इनके प्रमुख ग्रंथों के नाम हैं –

कीर्तिलता, कीर्तिपताका और विद्यापति पदावली

विद्यापति के काव्य में श्रृंगार रस की प्रधानता है। इनके नायक कृष्ण हैं और नायिका राधा। परंतु यहाँ राधा – कृष्ण ईश्वर के रूप में नहीं बल्कि सामान्य नायक – नायिका के रूप में चित्रित किए गए हैं। अनेक विद्वानों के मध्य विद्यापति के काव्य को लेकर यह विवाद रहा है कि वे श्रृंगारी कवि हैं या भक्त कवि।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल विद्यापति को श्रृंगारी कवि मानते हैं। उनका कथन है –

“विद्यापति के पद अधिकतर श्रृंगार के हैं, जिनमें नायिका और नायक राधा – कृष्ण हैं। इन्होंने इन पदों की रचना श्रृंगार काव्य की दृष्टि से की है, भक्त के रूप में नहीं।”

दूसरी तरफ कई विद्वान विद्यापति को भक्त कवि मानते हैं। विद्यापति को भक्त कवि मानने वाले विद्वानों में प्रमुख हैं –

डॉ. ग्रियर्सन, डॉ. श्यामसुंदर दास, डॉ. जयनाथ नलिन आदि। बाबू गुलाबराय ने कहा है –

“विद्यापति सूरदास और नंददास के साथ गिनाए जाएंगे, न कि बिहारी और देव आदि श्रृंगारी कवियों के साथ। श्रृंगारी और भक्त कवि दोनों इष्ट देव के श्रृंगार का वर्णन करते हैं; परंतु भक्त कवि के वर्णन में हृदय के जिस उल्लास की व्यंजना होती है, वह श्रृंगारी कवि के नहीं। इस दृष्टि से विद्यापति रसिक भक्त हैं। इसलिए कहीं रसिकता प्रबल हो जाती है, कहीं भक्ति।”

इस प्रकार विभिन्न विद्वानों ने अपनी – अपनी रुचि के अनुसार उन्हें भक्त और श्रृंगारी सिध्द करने का प्रयास करते रहे हैं।

विद्यापति ने यद्यपि भक्तिपरक रचनाएँ भी की हैं, परंतु वे कबीर, तुलसी, सूर, मीरा आदि भक्तकवियों की भाँति भक्ति की लीक पर कभी नहीं चले। उन्होंने श्रृंगारिकता को भक्ति के आवरण से ढँकने का प्रयास भी कभी नहीं किया। उन्होंने जीवन – जगत के विविध प्रसंगों और विषयों पर लिखा है अतः कुछ भक्तिपरक रचनाएँ भी की हैं। विद्यापति शिव के अनन्य भक्त थे। उन्होंने गंगा के प्रति भी भक्तिभावना से ओतप्रोत रचना की है –

“कत सुखसार पाओल तुअ तीरे।

छाड़इत निकट नयन बह नीरे।।

करजोरि बिनमओ विमल तरंगे।

पुन दरसन होए पुनमति गंगे।।

विद्यापति पूर्ण आस्तिक भाव से समसामयिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए माधुर्य भाव का जीवंत चित्रण करते हैं, वे सौंदर्य को सजीव रूप में साकार कर देते हैं। विद्यापति सौंदर्य और श्रृंगार के विविध चित्र मनोहारी रूप में प्रस्तुत करते हैं। इनकी रचनाओं पर दृष्टिपात करते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि विद्यापति श्रृंगारी कवि हैं। इन्होंने श्रृंगार के संयोग – वियोग दोनों पक्षों का वर्णन किया है, किंतु इसमें अस्वस्थ समाज की कोई भी प्रवृति या मनोवृत्ति नहीं दिखाई देती है। इनकी रचनाओं में कहीं भी मनोवैज्ञानिकता का ह्रास नहीं हुआ है। उन्होंने अपनी रचनाओं में भक्तिभावना को भी स्थान दिया है परंतु प्रमुखता से श्रृंगार भाव को चित्रित किया है।

विद्यापति की प्रसिद्धि का प्रमुख आधार उनकी पदावली ही है। उन्होंने संस्कृत, अवहट्ठ और मैथिली भाषाओं में अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। उनके काव्य की महत्वपूर्ण विशेषता है - भाषा – लालित्य। 'कीर्तिलता' की भाषा के संबंध में उन्होंने स्वयं कहा है –

"देसिल बयना सब जन मिट्ठा।

तै तैसन जम्पओ अवहट्ठा।।"

भाषा पर इनका पूर्ण अधिकार था। सरल – सहज आम जन की भाषा को इन्होंने अपने काव्य के लिए चुना। मधुरता और कोमलता विद्यापति के काव्य की खास पहचान है।